उलझे पेचों को सुलझाने की एक दास्तान: 'कब आऊं?'

रविकांत

पढ़ने-पढ़ाने की हमारी परंपरा में 'समझने' पर कम ही जोर दिया जाता है। 'पढ़ देने' या 'पढ़ लेने' भर से यह मान लिया जाता है कि 'पाठ' (टैक्स्ट) समझ में आ गया है। यदि कोई शिक्षक सही मायने में किसी 'पाठ' को समझने-समझाने पर काम करता है तो बहुत-सी मुि श्कलें आती हैं। यह लेख कहानी विधा के समझने-समझाने की प्रक्रिया में आने वाली मुश्किलों और उसके कारणों को तलाशने की कोशिश करता है।

किसी कहानी को समझने के मायने क्या है? क्या कोई कहानी पढ़ते ही अपने आप समझ में आ जाती है? या किसी अध्यापिका के व्याख्या कर देने भर से समझ आ जाती है? या कहानी में दी गई जानकारियों पर सवाल-जवाब कर देने भर से उसे समझा जा सकता है? या उसका मतलब किसी वक्त स्वतः उजागर होता है? ऐसे ही अनेक सवालों की समझ शिक्षकों को बेहतर काम करने में मददगार हो सकती है ताकि वे उन कहानियों के अर्थ को समझने में बच्चों का सहयोग कर सकें।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या 2005 की रोशनी में बनाई गई हिंदी की पाठ्यपुस्ताकों का नाम रिमझिम रखते वक्त इन किताबों के लेखक मंडल ने रिमझिम शब्द में झनझनाती आवाज, उसकी लयात्मकता, सार्थकता का ख्याल भी रखा होगा। उन्होंने यह भी सोचा होगा कि इन किताबों के जरिए बच्चे न सिर्फ कविता, कहानी, नाटक, वर्णन, पत्र, यात्रा वृतांत्त, संस्मरणों आदि का लुत्फ लें बल्कि इनके साथ कलात्मक अनुभवों और आसपास के पर्यावरण को भी जानें-समझें। लेकिन किताबों में रखी कहानियां या किसी दूसरी विधा में लिखी कोई चीज बच्चों के लिए तब तक लिपि नामक पिंजरे में कैद रहती हैं, जब तक कोई उन्हें उस पिंजरे की चाबियां तलाश कर खोलना सिखा न दे। शुरुआती कक्षाओं में इनके अगल-बगल में दी गई रंग-बिरंगी तस्वीरें इसमें मदद करती हैं, जिनकी मदद से कहानी के बारे में कुछ अनुमान लगाया जा सकता है और कुछ इसके बाद दिए गए अभ्यास होते हैं और फिर अध्यापक तो है ही अपनी आवाज के उतार-चढ़ाव, चेहरे व शरीर के हाव-भाव के जरिए उनमें जान फूंकने के लिए।

अध्यापकों के साथ काम करते वक्त अक्सर कोई न कोई कहानी या कविता ऐसी टकरा ही जाती है जो न सिर्फ साहित्यिक मापदंडों के लिहाज से बेहतरीन होती है बल्कि सोचने पर भी मजबूर कर देती है और बच्चों को भी पुलक से भर देती है। रिमझिम शिक्षकों को चुनौतीपूर्ण अनुभवों से जूझने का मौका भी पेश करती हैं। उन्हें रुककर कई बार गहराई से सोचना पड़ता है कि इस विधा का बच्चे लुत्फ कैसे उठाएं और मर्म को कैसे समझें।

कक्षा तीन की रिमझिम में '*कब आऊं*' नामक कहानी एक शिक्षक के सामने इस तरह की चुनौती पेश करने में कामयाब है। पहले हम कहानी को समझ लेते हैं। आवंती ने अपने हुनर के बूते रंगाई की दुकान जमाई है। उसके हुनर की चौतरफा होती तारीफ से जल-भुनकर एक सेठ उसे परेशान करने के लिए एक कपड़ा रंगने के लिए देता है। सेठ बहुत से प्रमुख रंगों से अपनी नापसंदगी जाहिर करके आवंती से कहता है कि वह उन रंगों के अलावा

लेखक परिचय

तकरीबन 20 वर्षों से प्रारंभिक शिक्षा में शिक्षक शिक्षा, शिक्षण सामग्री, पाठ्यपुस्तक निर्माण, शिक्षाक्रम और अनुवाद के क्षेत्र में कार्य। हाल-फिलहाल विभिन्न संस्थाओं के साथ बतौर शैक्षिक सलाहकार कार्यरत हैं।

किसी भी रंग से कपड़े को रंग दे। अक्लमंद आवंती कपड़े को रंगने की हामी भरकर, उसे अलमारी में बंद करके ताला लगा देता है। जब सेठ उससे पूछता है कि रंगा हुआ कपड़ा लेने कब आऊं तो आवंती एक-एक करके सातों वारों के नाम बताकर उससे कहता है कि इनके अलावा किसी भी दिन आकर ले जाएं। सेठ अपनी तिकड़म को नाकाम होता देखकर कपड़े से हाथ धोकर अपना सिर धुनता हुआ चला जाता है।

पहली नजर में कहानी सीधी-सादी लोक कथा-सी लगती है जिसमें दांव और जवाबी दांव चला जाता है (यह बात आगे चलकर समझ आती है कि इन दोनों दांवों में एक-एक पेच है जिसे खोले बिना इसे बच्चों को समझाना मुश्किल है)। कहानी बहुत ही सरल भाषा में लिखी गई है सो इसे पढ़कर समझने या समझाने में भला क्या मुश्किल हो सकती है। हम बड़ों के लिए शायद अपने व्यापक अनुभवों की वजह से इस कहानी को पढ़कर समझना और इसमें दिए नतीजों तक पहुंचना चुटकी बजाने जितना आसान है। बच्चों के लिए भी इस छुटकी-सी कहानी को रटकर याद कर लेना कोई खास मुश्किल काम नहीं।

अगर आप इस कहानी को रटवाना चाहते हों तो उसके लिए मशहूर तरीका 'तू पढ़' पहले से मौजूद है ही। जिसमें एक-दो बार कहानी शिक्षक पढ़कर सुनाता है और कुछ जगहों पर अपने हिसाब से 'समझा' भी देता है। फिर कक्षा के वे बच्चे पढ़ते हैं जो उसे आसानी से पढ़ पाते हैं। इसे भी आप तब तक जारी रख सकते हैं जब तक कि कक्षा के हर बच्चे की बारी न आ जाए या जब तक शिक्षक को तमाम सरकारी या गैर-सरकारी या प्रशासनिक किस्म के कामों से फुरसत हासिल न हो जाए। लेकिन अगर कोई अध्यापक यह तय कर ले कि वह बच्चों को खुद उन नतीजों तक पहुंचने में मदद करेगा, जिन नतीजों पर आवंती और सेठ पहुंचे हैं तो बच्चों को इस कहानी को पढ़ाना एक बेहद चुनौतीपूर्ण व रोमांचक काम में तब्दील हो जाता है।

करना तैयारी कहानी को समझाने की

एक राजकीय स्कूल के कक्षा तीन के बच्चे इस कहानी को सुन-पढ़कर अच्छी तरह से समझ पाएं, इस मंशा से अध्यापिका ने इस कहानी पर काम करने की योजना में कई कदम तय किए जिसमें बातचीत करना एक प्रमुख तरीके के तौर पर शामिल था। वह बच्चों से कहानी नहीं पढ़वाना चाहती थी क्योंकि पूरी कक्षा में कुछ ही बच्चे उस कहानी को खुद पढ़ पाने के काबिल थे। वह चाहती थी कि भले ही सभी बच्चे अपने-अपने स्तर के हिसाब से कहानी पढ़ें लेकिन समझ सभी लें। सो उसने कहानी पर काम करने के कदम कुछ इस तरह से चुनेः

- कहानी के शीर्षक के अर्थ पर बातचीत करना
- कहानी के शीर्षक से कहानी के बारे में बच्चों से अनुमान लगवाना
- कहानी के चित्रों पर बातचीत करना
- कहानी सुनाना
- कहानी पर बातचीत
- बच्चों से पूछते हुए कहानी में आई घटनाओं को क्रम से जमाना

शुरुआत कहानी पर काम की

सबसे पहले अध्यापिका ने बच्चों से शीर्षक का मतलब पूछा। शीर्षक की मदद से कहानी के बारे में अनुमान लगा पाने की काबिलियत पर संभवतः उसे खास यकीन नहीं था, सो उसने अनुमान लगवाने का काम अकेले शीर्षक के साथ न करके चित्रों पर बातचीत करने के दौरान किया। अध्यापिका ने कहानी के चित्रों पर दो प्रमुख सवालों के जरिए बच्चों के साथ बातचीत की। पहला, इस चित्र में कौन-कौन है और दूसरा, इसमें क्या-क्या हो रहा है? फिर अध्यापिका ने कहानी सुनाई, कहानी पर बातचीत की और उसमें आई घटनाओं को बच्चों से पूछकर क्रम से जमाया। बच्चों को कहानी समझाने के लिहाज से अध्यापिका ने कहानी में तीन ऐसी जगहें चुनीं जिन पर जोर देने से कहानी को समझना आसान हो सकता था। पहली, सेठ का कपड़ा रंगने देने के पीछे का इरादा, दूसरी, सेठ का रंगों वाला

दांव और तीसरा, आवंती का वारों वाला दांव। कहानी सुनाते व उस पर बात करते वक्त अध्यापिका ने इन तीनों जगहों पर थोड़ा ठहर कर बच्चों के साथ काम किया।

सेठ के इरादे को बच्चों के सामने उजागर करने के लिए उसने सेठ के उस संवाद का बच्चों से दोहरान करवाया, जो सेठ ने दुकान में दाखिल होते वक्त बुलंद आवाज में बोला था, ''आवंती, जरा ये कपड़ा तो अच्छी तरह से रंग दो''। बच्चों ने मजे के साथ एक-दो बार इस संवाद को दोहराया।

कहानी के अगले दो प्रमुख मोड़ों पर अध्यापिका ने बच्चों से रंगों की सूची बुलवाई और आखिर में सभी वार बुलवा दिए। कहानी सुनाते वक्त अध्यापिका बच्चों को जोड़े रखने के लिए बीच-बीच में ऐसा कोई सवाल पूछ रही थी जिसका जवाब उस सवाल से तुरंत पहले बोले गए वाक्य या वाक्यांश में होता था। कुछ बच्चे उस सवाल का तुरंत जवाब दे देते थे।

बतियाना सुनी हुई कहानी पर

पूरी कहानी सुना देने के बाद अध्यापिका ने बच्चों के साथ बातचीत शुरू की। उनसे कहानी में आए पात्रों के नाम पूछे। बातचीत के दौरान अध्यापिका ने पूरी कोशिश की कि बच्चों को सेठ का तर्क समझ में आए और बच्चे इस नतीजे पर पहुंचें कि सेठ किसी भी रंग में अपना कपड़ा रंगवाना नहीं चाहता था बल्कि आवंती को परेशान करना चाहता था। इस कोशिश में उसने बच्चों से पूछा कि सेठ ने किस-किस रंग में कपड़ा रंगने के लिए मना किया। बच्चे उत्साह से बताने लगे काला, लाल, पीला, हरा...। अध्यापिका ने सोचा कि अब तक तो बच्चे इस नतीजे पर पहुंच चुके होंगे कि सेठ किसी भी रंग में कपड़ा नहीं रंगवाना चाहता है। सो उसने पूछा, ''तो बताओ आवंती किस रंग में कपड़ा रंगेगा?'' बच्चों ने अपनी कल्पनाशीलता और रंगों के अनुभव और बातचीत से हासिल समझ का इस्तेमाल करते हुए तुरत-फुरत जवाब अध्यापिका की ओर ठेल दिए गुलाबी, जामुनी...। अध्यापिका ने एक कोशिश और की। उसने बच्चों से पूछा कि सेठ ने कहा कि इतने सारे रंग मुझे पसंद नहीं हैं तो आवंती कपड़ा कौनसे रंग में रंगेगा? बच्चों ने फिर से काले, पीले रंग के नाम दोहरा दिए। शायद उनके दिमाग से यह बात निकल चुकी थी कि ये रंग सेठ की नापसंदगी की सूची में पहले से ही मौजूद थे।

अध्यापिका समझ गई कि बच्चे उसके मनपसंद नतीजे तक नहीं पहुंचे। सो उसने इसी बात को दूसरे तरीके से समझाने के लिए अपने व्यवहारिक ज्ञान का इस्तेमाल किया। उसने बच्चों से पूछा कि हम जब कपड़ा रंगवाने जाते हैं तब जिस रंग में रंगवाना हो उस रंग के कपड़े का टुकड़ा देते हैं या कोई रंग बताते हैं। बच्चों ने जवाब दिया, ''बताते हैं''। क्या सेठ ने आवंती को कपड़ा रंगने के लिए कोई रंग बताया? बच्चों ने आसानी से कह दिया, ''नहीं बताया''। लेकिन संभवतः वे अभी भी मन ही मन ऐसा रंग खोजने की जुगत में लगे थे, जिसमें कपड़ा रंग दिया जाए। बच्चों से नतीजा निकलवाने में नाकाम होकर अध्यापिका को आखिरकार बताना पड़ा कि सेठ किसी भी रंग में कपड़ा नहीं रंगवाना चाहता था। जाहिर है नतीजा भले ही अध्यापिका ने बता दिया, बच्चों ने अध्यापिका पर अपने भरोसे के चलते उसे मानकर दोहरा भी दिया लेकिन न तो बच्चों की आवाज में किसी नतीजे तक खुद पहुंच पाने का भरोसा दिखा और न ही उनके चेहरे पर उसकी खुशी चमकी।

कहानी के आखिरी व अहम् मोड़ पर अध्यापिका ने बातचीत के जरिए फिर इस बात की कोशिश की कि बच्चे खुद यह समझ जाएं कि असल में आवंती कह तो रहा है कि कभी भी आ जाओ लेकिन अगले ही वाक्य में वह जो शर्त लगा रहा है उसके मुताबिक सेठ किसी भी दिन अपना कपड़ा लेने नहीं आ सकता। उसने बच्चों से पूछा, ''बताओ, आवंती ने सेठ को किस-किस दिन आने से मना किया?'' बच्चों ने एक बार फिर जोर-शोर से वारों के नाम दोहरा दिए। फिर जब अध्यापिका ने बच्चों से जानना चाहा कि सेठ किस दिन कपड़ा लेने आ सकता है, तो बच्चों के बीच चुप्पी छा गई। एकाध बार फिर वारों के नामों की सूची का दोहरान करवाकर अध्यापिका ने कोशिश की कि बच्चे जवाब तक खुद पहुंच पाएं, लेकिन ऐसा हो नहीं पाया तो अध्यापिका ने बच्चों को एक सुराग देकर पूछा कि आवंती

ने कहा कि इन वारों में मत आना तो अब कौनसा दिन बचा? एक बच्चे ने मन ही मन दिनों का हिसाब लगाकर कहा कि कोई सा भी दिन नहीं बचा। मन में लग रहे हिसाब की तस्वीर उसके चेहरे पर पढ़ी जा सकती थी। लेकिन बाकी सभी बच्चे इस नतीजे पर खुद पहुंचने में नाकाम रहे। आखिर में अध्यापिका ने बातचीत को पूरा करते हुए कहा कि कोई सा भी रंग नहीं बचा और कोई सा भी दिन नहीं बचा। यानी अध्यापिका को अपनी ओर से वह नतीजा सुनाना पड़ा जिसके बारे में उसकी पुरजोर कोशिश थी कि बच्चे खुद उस नतीजे तक पहुंचें।

अब तक के कामों से यह साफ हो गया होगा कि ये शीर्षक व चित्रों पर बातचीत व अनुमान लगाना, कहानी सुनाना आदि काम कहानी को समझने की पृष्ठभूमि बनाने के लिए किए गए थे और कहानी के केन्द्रीय मुद्दे को गहराई से समझने का काम उस पर की जाने वाली बातचीत के दौरान किया गया।

करना चिंतन अपने सहकर्मियों के साथ

कक्षा में काम करने के बाद अध्यापकों के समूह में इस काम को देख-सुनकर समझने की कोशिश की गई। अध्यापिका के काम के बारे में सभी की राय थी कि कक्षा बहुत ही व्यवस्थित तरीके से चली, करीब-करीब सभी बच्चों ने कहानी ध्यान से सुनी, पूछे गए कई सवालों के जवाब भी दिए। अध्यापिका द्वारा की गई बातचीत में हिस्सा लिया। कहानी में से जरूरी जानकारियों को भी पहचान कर बताया लेकिन बच्चे खुद नतीजा नहीं निकाल पाए। इन सब कामयाबियों और अपनी पूरी कोशिश के बावजूद अध्यापिका सिर्फ एक बच्चे को आवंती के तर्क को समझने की दहलीज तक पहुंचा पाने में कामयाब रही।

पहला सवाल यह उठाया गया कि क्या बच्चे सेठ के संवाद के दोहरान से सेठ की मंशा को भांप पाए? इस पर यह बात आई कि सेठ ने जो संवाद बोला उससे बच्चों को थोड़ा बहुत अहसास हुआ हो सकता है लेकिन सेठ की मंशा को बच्चों के सामने साफ तौर पर जाहिर करने के लिए बात करने की जरूरत थी। इस संवाद को सेठ द्वारा महसूस की जा रही ईर्ष्या से भी जोड़ने की भी जरूरत थी। हालांकि अध्यापिका ने ईर्ष्या का मतलब जलन के तौर पर बताया था लेकिन सेठ की मंशा व उस जलन का आपसी संबंध जोड़ने का कोई काम नहीं किया गया। अगर बच्चों के दिमाग में यह संबंध जुड़ पाता तो मुमकिन है कि आगे जाकर सेठ और आवंती के दांव और जवाबी दांव को समझने में मदद मिलती।

फिर यह बात भी आई कि बच्चों का ध्यान रंग और वार पर था या आवंती और सेठ की इस बात पर कि 'किसी भी दिन आ जाओ' या 'कोई भी रंग रंग दो'। बच्चे दोनों में संबंध जोड़कर कोई नतीजा नहीं निकाल पा रहे थे, इसकी वजह क्या रही होगी?

इसका कारण समझने के लिए समूह का ध्यान इस ओर दिलाया गया कि बच्चों के साथ काम करते वक्त अध्यापिका रंगों और वारों की सूची तो बच्चों से बनवा रही थी लेकिन उस सूची में आए रंगों और वारों के बारे में नतीजेनुमा वक्तव्य खुद दे रही थी कि कोई भी रंग नहीं चाहिए या इन वारों को मत आना। अतः अध्यापिका द्वारा रंगों व वारों की सूची को बच्चों द्वारा दोहराने से संभवतः उनके दिमाग में रंगों व वारों के नामों की सूची तो ठीक-ठाक बन पाई लेकिन कहानी में उन रंगों और वारों की सूची क्यों बनाई या बनवाई जा रही है, और उस सूची का अगली बात से क्या संबंध है, यह बात उन्हें साफ नहीं हो पाई। मुमकिन है अध्यापिका के पास इन दोनों बातों में संबंध को जोड़ पाने की कोई कार्य नीति न हो। यह भी साफ था कि अध्यापिका ने दो-तीन बार इसकी कोशिश भी की कि बच्चे खुद नतीजे तक पहुंचें और जब वे नहीं पहुंच पाए, तब उसने नतीजा बताया।

बातचीत में सभी का ध्यान इस बात की ओर दिलाया गया कि कहानी में दोनों ही प्रमुख पात्र क्या करना है यह नहीं, बल्कि क्या नहीं करना है, यह बताते हैं। इसमें सेठ कई रंगों में नहीं रंगने और आंवती सभी वारों को लेने आने

के बारे में मना करते हैं। यानी इस कहानी को समझने की कुंजी इस बात को समझने में है कि क्या 'नहीं' करना है और उससे इस नतीजे तक कैसे पहुंचें कि आखिर करना क्या है?

तब सवाल यह उठा कि कहानी में मौजूदा 'नकार यानी नहीं' के भाव को कैसे बच्चों के सामने उभारा जाए? रंगों और वारों के बारे में किस तरह से बात की जाए कि बच्चों का ध्यान उनके नकार पर जाए। लिखित सामग्री में रंगों व वारों की सूची ज्यादा जगह घेरती है और 'नहीं' को उनकी तुलना में बहुत कम जगह मिलती है। इस पर सुझाव यह आया कि रंगों पर बात कुछ इस तरह से की जा सकती है कि अध्यापिका पूछे कि सेठ को कौन-कौनसा रंग नहीं चाहिए। अध्यापिका रंग का नाम बोले, जैसे 'लाल रंग' और बच्चे एक सुर में बोलें 'नहीं चाहिए'। इसी तरह से वारों पर बात करते समय यह किया जा सकता है कि अध्यापिका वार का नाम बोले और बच्चे एक साथ बोलें 'मत आना' और आखिर में अध्यापिका जोड़ दे कि अब बताओ सेठ किस वार को आकर कपड़ा ले जा सकता है?

बचा रहना कुछ चीजों का चिंतन के बाद भी

अध्यापिका के साथ बातचीत पूरी हो जाने के बाद भी एक सवाल लगातार खटकता रहा कि आखिर बच्चे अध्यापिका की इतनी कोशिश के बावजूद खुद सही नतीजे तक क्यों नहीं पहुंच पाए? क्या शिक्षक समूह में जो बातचीत की गई, उन्हें करने से बच्चे चाहे गए नतीजों तक पहुंच पाएंगे? क्या सेठ के तर्क और आवंती के तर्क से नतीजे निकालने का तरीका एक ही है या अलग-अलग है? क्या दोनों के चलाए गए दांवों की बुनावट एक ही है या अलग-अलग है? क्या दोनों के दावों के पेच एक ही तरह से खुलेंगे या अलग-अलग तरह से खुलेंगे? आवंती के तर्क में ऐसी क्या बात थी कि कम से कम एक बच्चा तो उस नतीजे तक पहुंच गया जहां उसे किताब और अध्यापिका पहुंचाना चाहती थी, जबकि सेठ के तर्क के मामले में बहुतेरी कोशिशों के बावजूद कोई भी बच्चा उस नतीजे तक नहीं पहुंच पाया? ◆

रचनात्मक सहयोग के लिए आमंत्रण

शिक्षा के क्षेत्र में काम करने वाले जो साथी शिक्षण, शिक्षक प्रशिक्षणों या किसी भी प्रकार की शैक्षिक गतिविधियों से जमीनी तौर पर जुड़े हैं वे भी हमें अपने अनुभव लिखकर भेज सकते हैं। कार्य के दौरान होने वाले अच्छे अनुभवों और चुनौतियों का विश्लेषण करते हुए हमें लिख भेजें। शब्द सीमा 1500 से 2000 शब्द। लेख प्रकाशित होने पर नियमानुसार मानदेय भुगतान का प्रावधान है।

संपादक